Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 13, Issue No. 2, July-2017, ISSN 2230-7540

भारत में इस्लाम का आगमन और भारतीय समाज पर इसके प्रभाव: एक आलोचनात्मक अध्ययन

Dr. Anurag*

Assistant Professor, Department of History, Guru Nanak Khalsa College, Yamuna Nagar, Haryana

सार – सातवीं सदी में इस्लाम का उदय विश्व इतिहास में एक युगान्तकारी घटना थी । इसके प्रर्वत्तक हज़रत मुहम्मद (570–632) थे । उनके उपदेशों और शिक्षाओं के फलस्वरूप उदित हुए इस्लाम का जोर एकेश्वरवाद और भाईचारे पर अधिक रहा था । इस्लाम के उदय से पहले जो अरब अंधकार में डूबा हुआ था और प्रायः सभी क्षेत्रों में पिछड़ा हुआ था, उसी अरब को पहले हज़रत मुहम्मद ने और बाद में खलीफाओं ने एक शक्तिशाली और संगठित साम्राज्य के रूप में परिणित कर दिया था। पैगम्बर मुहम्मद की मृत्यु के पश्चात् उनके अधूरे कार्य को धर्मनिष्ठ खलीफाओं (632–661ई०) ने आगे बढ़ाया । तत्पश्चात् उमैयद खलीफाओं (661–750 ई०) और बाद में अब्बासिद खलीफाओं (750–1258 ई) के समय इस्लामिक राज्य के स्वरूप में कई बदलाव आए और इस्लामिक राज्य का काफी विस्तार भी हुआ । इसी अवधि के दौरान हिन्दुस्तान के सिन्ध क्षेत्र में अरबों का आक्रमण हुआ और इस्लाम का भारत में प्रचार–प्रसार संभव हुआ। हालांकि आधुनिक इतिहासकारों ने अरबों की सिन्ध व मुल्तान विजय को इस्लाम के संदर्भ में एक मामूली घटना ही माना है तथापि अरबों के आरम्भ किए हुए कार्य को तुर्कों ने पूर्ण किया। अरबों की बजाय तुर्क लोग अधिक महत्वाकांक्षी एवं उत्साही धर्मप्रचारक थे। हिन्दुस्तान में विशेषकर महमूद गज़नवी के आक्रमण तथा पंजाब विजय के पश्चात् ही इस्लाम के प्रचार–प्रसार के तौर तरीकों में बदलाव आना शुरू हुआ था । इस अवधि से अनेक मुस्लिम सूफी सन्तों ने यहां के सांस्कृतिक एवं धार्मिक जीवन को प्रभावित करना शुरू कर दिया था । आगे के काल में मोहम्मद गौरी के आक्रमणों और दिल्ली सल्तनत (1206) की स्थापना होने से यहां हिन्दुस्तान में विविध क्षेत्रों में इस्लाम का प्रभाव पड़ना शुरू हो गया था।

मुख्य शब्दः सूफी, अल–जाहिलिया, पैगम्बर, इक्ता, मदरसा, ममलूक, खिलज़ी, तुगलक, तुर्क प्रस्तुत शोध लेख में मुख्यतः हिन्दुस्तान में इस्लाम का आगमन और प्रचार–प्रसार कैसे और किन कारणों से हुआ, इससे संबंधित जानकारी दी जाएगी। इसके अतिरिक्त इस्लाम ने भारतीय धर्म व संस्कृति, प्रशासन एवं आर्थिक दशा को किस सीमा तक प्रभावित किया था, इस पर भी प्रकाश डाला जाएगा।

----------X----------

इस्लामः ऐतिहासिक पृष्ठभूमिः

इस्लाम का उदय सातवीं सदी में अरब प्रायद्वीप में हुआ था। इसके संस्थापक हज़रत मुहम्मद (ज० 570ई०) थे। मुहम्मद साहब का जन्म और इस्लाम का अभ्युदय अरब के इतिहास में एक सीमाचिन्ह है[1]। सर वुल्लजले हेग[2] ने ठीक ही कहा है कि ''इस्लाम का उदय इतिहास की एक अति महत्वपूर्ण घटना है । हज़रत मुहम्मद की मृत्यु के एक शताब्दी बाद उनके उत्तराधिकारी और अनुयायी एक ऐसे साम्राज्य पर शासन करने लगे जिसका विस्तार प्रशान्त महासागर से सिन्धु तक और कैस्पियन से नील नदी तक था।'' लेकिन यह सब इतना सरल नहीं था क्योंकि सामान्यतः इस्लाम के उदय से पूर्व अरब के लोग प्रायः सभी क्षेत्रों में पिछड़े हुए थे। कुछ आधुनिक इतिहासकारों ने इस युग को 'जाहिलिया युग' का नाम दिया है। इस अवधि में अरब विभिन्न कबीलों में बंटा हुआ था। यहां राजनीतिक दृष्टि से अव्यवस्था फैली हुई थी। यहां के समाज में मुख्यतः बददू लोग थे जो असभ्य एवं पिछड़े हुए थे[3]। इस अवधि में अरब की अर्थदशा भी संगठित नहीं थी। धार्मिक दृष्टि से देखें तो इस्लाम पूर्व अरब के लोग बहुदेववादी और अंधविश्वासी थे। अज्ञानता के युग की इस स्थिति को देखकर यह अनुमान लगाना भी कठिन हो जाता है कि अरब जैसा पिछड़ा देश जल्द ही एक संगठित, सबल और प्रभावशाली साम्राज्य के रूप में कैसे बदला। अरब की मरूभूमि में बदलाव या परिवर्तन करने वाले सर्वाधिक प्रभावशाली व्यक्ति हज़रत मुहम्मद थे जिनका जन्म मक्का के कुरैश कबीला के बानू हाशिम परिवार में हुआ था। उनके उपदेशों और शिक्षाओं के फलस्वरूप उदित हुए 'इस्लाम' का जोर एकेश्वरवाद पर रहा था। वैसे अरबी शब्द इस्लाम का शाब्दिक अर्थ है 'समपर्ण'। इससे इस्लाम की इस मूलभूत भावना का बोध होता है कि इसमें विश्वास रखने वाला, जिसे मुस्लिम कहा जाता है, अल्लाह की इच्छा के समक्ष आत्मसमपर्ण करता है, वह 'कुरान' से उदघाटित होती है। सभी मुसलमानों के लिए यह ग्रन्थ पवित्र है और यह ग्रन्थ अल्लाह के दूत (पैगम्बर) मुहम्मद को होने वाले रहस्योद्घाटनों का संकलन है। मुहम्मद साहब के बारे में यह विश्वास भी किया जाता है कि वो उनके पूर्व संसार में आए पैगम्बरों (आदम, मोसेज व अन्य) के क्रम में अंतिम थे। उनका संदेश पहले आए पैगम्बरों को हुए रहस्योद्घाटनों को पूर्णता प्रदान करता है।

पैगम्बर मुहम्मद की मृत्यु (632) के पश्चात धर्मनिष्ठ खलीफाओं (632–661) ने उनके अधूरे कार्यों को सम्पादित किया और इस्लाम का प्रचार प्रसार किया। इसके पश्चात उमैयद खलीफाओं (661–750) और अब्बासिद खलीफाओं के काल में इस्लामिक

www.ignited.in

साम्राज्य का विस्तार हुआ और इस्लामिक समाज एवं अर्थदशा में भी अनेक बदलाव प्रारम्भ हुए। इतिहासकार एस.ए. रिज़वी का मत है कि ''समयानुसार इस्लाम राजनीतिक और धार्मिक बुनियादी सिद्धान्तों के आधार पर दो भिन्न सम्प्रदायों में भी बंट गया था – सुन्नी और शिया सम्प्रदाय''। दोनों के बीच मतभेद भी समयानुसार बढ़ते गए। एक उल्लेखनीय तथ्य यह है कि विशेषकर उमैयद खलीफाओं की अवधि में इस्लाम का प्रचार–प्रसार अरब क्षेत्र के बाहर स्थित अन्य देशों जैसे उत्तरी अफ्रीका, बैजन्टाइन, ईरान व हिन्दुस्तान के सिन्ध क्षेत्र में हुआ था।

हिन्दुस्तान में इस्लाम का आगमन व विकास :

हिन्दुस्तान में इस्लाम के आगमन व विकास के लिए कोई एक विशेष कारण जिम्मेवार नहीं था। हिन्दुस्तान में इस्लाम का प्रवेश व प्रसार मुख्यतः मुस्लिम आक्रमणकारियों, अरब व्यापारियों, तथा सूफी सन्तों की गतिविधियों द्वारा हुआ। हिन्दुस्तान में इस्लाम का प्रवेश सबसे पहले दक्षिण भारत में अरब व्यापारियों द्वारा किया गया जो अपने समुद्रपार या विदेशी व्यापार के सिलसिले में हिन्द के तटीय क्षेत्रों में इस्लाम के उदय से पहले ही आ चुके थे। इस सन्दर्भ में इतिहासकार रिचर्ड ईटन मानते हैं कि ''चूंकिं विदेशी व्यापार राज्य की आय का एक प्रमुख स्रोत था इसलिए हिन्दू शासकों ने मुस्लिम व्यापारियों को अपनी बस्तियों को स्थापित करने की आज्ञा दी विशेष रूप से मालाबार व अन्य तटीय क्षेत्रों में। इतिहासकार आई.एच. सिद्दीकी भी मानते हैं कि ''यहां अरब व्यापारियों को पूर्ण धार्मिक स्वतंत्रता भी प्रदान की गई थी[4]।'' समयानुसार यहां मुसलमानों की संख्या भी बढ़ने लगी थी। जैसा कि इक्तैदार हुसैन सिद्दीकी भी लिखते हैं कि आरम्भ में इस्लामिक संस्कृति अपने समतावादी विचारों के बावजूद यहां के शहरी वर्गों को आकर्षित नहीं कर पाई थी[5]। लेकिन धीरे–धीरे अरबी भाषा और इस्लाम धर्म के खुलेपन और सर्वमुक्तिवाद जैसी विशेषताओं ने हिन्दुस्तान के नगरों और शहरों के लोगों के दृष्टिकोण पर प्रभाव डालना शुरू कर दिया था।

अरबों द्वारा सिन्ध की विजय एवं उसके प्रभाव :

अरबों द्वारा सिन्ध क्षेत्र की विजय पर विचार करने से पूर्व 8वीं शताब्दी के आरम्भ में हिन्दुस्तान की दशा पर प्रकाश डालना भी आवश्यक है। जहां तक राजनीतिक दशा का सम्बन्ध है, उस समय देश में कोई सर्वोच्च शासन शक्ति नहीं थी। हिन्दुस्तान विभिन्न राज्यों का जमघट था और प्रत्येक राज्य स्वतंत्र एवं सार्वभौम था। उस समय विभिन्न भारतीय राज्यों में एकता की भावना का अभाव था और कोई ऐसा शक्तिशाली राज्य न था जो सफलतापूर्वक उत्साही अरबों के आक्रमण को रोक सकता। इसके अतिरिक्त सामाजिक एवं धार्मिक दृष्टि से भी हिन्दुस्तान बंटा हुआ था। हिन्दू समाज में जाति प्रथा पहले से दृढ़ हो चुकी थी। अधिकांश आधुनिक इतिहासकारों का मत है कि उस समय का हिन्दू समाज परस्पर इर्ष्या, जाति और अन्य विभाजनों के कारण मुसलमानों के आक्रमण का सफल प्रतिरोध करने के योग्य न था। इन्हीं परिस्थितियों में अरबों ने हिन्दुस्तान के सिन्ध क्षेत्र पर 712 ई. में आक्रमण किया। कुछ आधुनिक इतिहासकार यह भी मानते हैं कि अरबों की सिंध विजय का वास्तविक कारण इस्लाम धर्म का प्रचार और लूट की धनराशि से अपने का समृद्ध बनाना था। इसलिए 712 ई. में अरबों ने मुहम्मद बिन कासिम के नेतृत्व में एक विशाल अरब सेना सिन्ध क्षेत्र में भेजी। उस समय सिन्ध का शासक दाहिर था। अन्ततः अरबों द्वारा सिंध को जीत लिया गया और विजेता सेना को इस अभियान से बहुत धनराशि भी प्राप्त हुई। अरबों की सिन्ध विजय के संदर्भ में इतिहासकार ईश्वरी प्रसाद का मत है कि ''सिंध पर मुहम्मद बिन कासिम का आक्रमण एक रोमांचकारी घटना है[6]। उसकी वीरता एवं अतुल्य साहस ने उसको शहीद की उपाधि प्रदान की है।'' इसके पश्चात् अरब सेना ने मुल्तान को जीता जहां से उन्हें काफी स्वर्ण और धन मिला। विजय के लगभग 150 साल तक सिन्ध और मुलतान के क्षेत्र खलीफा के साम्राज्य के अन्तर्गत रहे। इस काल में अरबों ने ही इन प्रान्तों का शासन प्रबन्ध किया।

अरबों की सिन्ध विजय को इस्लाम के संदर्भ में आधुनिक इतिहासकारों ने अधिक प्रभावपूर्ण विजय नहीं माना है। स्टेनले लेनपूल के शब्दों में, ''सिन्ध को अरबों ने विजय तो किया किन्तु यह विजय ऐतिहासिक और इस्लाम के संदर्भ में घटना मात्र ही रही[7]। यह एक प्रभावरहित विजय थी।'' वुल्जले हेग का भी मानना है कि ''अरबों की सिन्ध विजय अधिक प्रभावशाली नहीं थी। यह केवल ऐसी घटना थी जिसने एक विशाल देश के छोटे से भाग को प्रभावित किया था। इस विजय ने सीमा के भू–भाग में उस धर्म का सूत्रपात किया जिसने आगे लगभग पांच शताब्दियों तक भारत के मुख्य भाग पर छा जाना था।'' इसी प्रकार हैवल ने भी माना है कि राजनीतिक दृष्टि से अरबों की सिन्ध विजय की घटना का तुलनात्मक महत्व नाममात्र ही है, परन्तु इस्लाम की संस्कृति पर इसके प्रभाव की महत्ता उल्लेखनीय है। लेकिन यह कहना भी उचित नहीं कि अरबों की सिन्ध विजय पूर्णतया प्रभावरहित विजय थी। पहली बार अरब के रेगिस्थान के रहने वाले भ्रमणप्रिय लोगों का सम्पर्क विकसित भारतीय सभ्यता के साथ हुआ। अरब के लोग भारतीय कला और ज्ञान से भी बहुत प्रभावित हुए[8]। विशेषकर अब्बासी खलीफाओं के काल में हिन्दू विद्वानों को बगदाद में बुलाकर चिकित्सा, दर्शन और ज्योतिष विद्या की संस्कृत भाषा की पुस्तकों का अरबी भाषा में अनुवाद करवाया गया। अरब के लोग भारतीय लोगों के विविध कलात्मक एवं वैज्ञानिक ज्ञान से बहुत प्रभावित हुए थे।

तुर्कों के आक्रमण :

अरब लोग यद्यपि हिन्दुस्तान पर आक्रमण करने वाले पहले मुस्लिम आक्रमणकारी थे तथापि अरबों की बजाय तुर्कों के आक्रमण ज्यादा प्रभावशाली थे। हिन्दुस्तान में एक स्थायी व सुदृढ़ शासन स्थापित करने वाले तुर्क थे। अरबों के प्रारम्भ किए हुए कार्य को तुर्कों ने पूर्ण किया था। इतिहासकार हबीबुल्लाह[9] भी मानते हैं कि भारत में एक शक्तिशाली राज्य की स्थापना का श्रेय तुर्कों को दिया जा सकता है। गजनी वंश का जन्मदाता अलप्तगीन तुर्क था। तुर्कों ने इस्लाम को अपना लिया था और ईरानी भाषा और संस्कृति को भी आत्मसात कर लिया था। अलप्तगीन तुर्क के पश्चात् सुबुक्तगीन गजनी का शासक बना। सुबुक्तगीन महत्वाकांक्षी था इसलिए उसने अपना ध्यान धन से परिपूर्ण हिन्दुस्तान की विजय की ओर लगाया। 986 ई० में सुबुक्तगीन ने हिन्द शाही वंश के राजा जयपाल के विरुद्ध सेना भेजी । इस युद्ध में जयपाल की सेना को भारी क्षति उठानी पड़ी और राजा जयपाल को संधि करने के लिए भी विवश होना पड़ा। अपनी मृत्यु से पहले सुबक्तगीन ने अपने राज्य में अफगानिस्तान, खुरासान, बल्ख और हिन्द के पश्चिमोत्तर सीमा के कुछ भागों को सम्मिलित कर लिया था। 997 में सुबुक्तगीन की मृत्यु हो गई थी। लेकिन वह अपने पुत्र महमूद के लिए एक विशाल और सुगठित साम्राज्य छोड़ गया था।

सुलतान महमूद (997–1030) के साथ ही इस्लाम के इतिहास में एक नया अध्याय शुरू होता है। सन् 1000 और 1026 ई० के बीच महमूद गज़नवी ने हिन्दुस्तान पर सत्रह बार आक्रमण किया और उसके हाथ काफी सम्पत्ति लगी। उसके आक्रमणों का मुख्य उद्देश्य क्या था, इस बारे में इतिहासकारों में मतभेद हैं। कुछ विद्वान मानते हैं कि उसके आक्रमणों का उद्देश्य धार्मिक था। वह हिन्दुस्तान में इस्लाम का प्रसार करना चाहता था। इसलिए कुछ इतिहासकारों ने उसे केवल एक मूर्तिभंजक आक्रमणकारी माना है। महमूद के शाही लेखक उत्बी ने हिन्द के विरुद्ध उसके आक्रमणों को इस्लाम धर्म का प्रचार एवं धार्मिक युद्ध 'जिहाद' का रूप दिया है। किन्तु महमूद के आक्रमणों को मात्र धर्मयुद्ध नहीं कहा जा सकता। कुछ विद्धान यह मानते हें कि उसके आक्रमणों का मुख्य उद्देश्य धन प्राप्त करना था ताकि वह मध्यएशिया में एक विशाल साम्राज्य स्थापित कर सके। प्रसिद्ध इतिहासकार मोहम्मद हबीब[10] और निजामी ने भी माना है कि उसके आक्रमणों का उद्देश्य मुख्यतः आर्थिक ही था। आक्रमणों से प्राप्त धन से ही उसने अपनी वित्तीय व्यवस्था को सुरक्षित किया और हिन्द से लूटे धन से ही उसने अपनी राजधानी गजनी को शानदार भवनों से अलंकृत किया था। महमूद गजनी के कुछ प्रमुख आक्रमण पंजाब के हिन्दू शाही राजाओं के विरुद्ध, मुल्तान, भटिंडा, नारायणपुर, थानेसर, कन्नौज, मथुरा तथा सोमनाथ के विरुद्ध थे। इनमें सबसे महत्वपूर्ण सोमनाथ पर आक्रमण (1024–26 ई.) था। उन दिनों सोमनाथ (गुजरात) का मंदिर अपनी अपार सम्पत्ति के लिए प्रसिद्ध था। 1030 ई. में गजनी में महमूद की मृत्यु हो गई थी[11]। इस अवधि में लाहौर इस्लामिक संस्कृति का एक समुन्नत केन्द्र बन कर उभरा था। धीरे–धीरे एक बड़ी संख्या में मुस्लिम विद्धान, उलेमा, सूफी सन्त कवि आदि ने यहां स्थानन्तरण करना शुरू कर दिया था । पंजाब प्रान्त से अनेक धर्मप्रचारक, व्यापारी, सूफी सन्त हिन्दुस्तान के अन्य इलाकों में फैलने लगे थे । इतिहासकार हबीबुल्लाह भी मानते हैं कि तुर्क लोग अति उत्साही थे और उन्होंने हिन्दुस्तान में न्याय, सौंदर्य, मानवतावाद एवं विद्धता के प्रति भी संवेदनशीलता दिखाई थी। 1030 से 1086 ई. तक महमूद के उत्तराधिकारियों ने पंजाब में शासन किया लेकिन राजनीतिक दृष्टि से यह काल उत्तरी भारत के संदर्भ में परस्पर युद्ध और अव्यवस्था के लिए प्रसिद्ध है। महमूद के उत्तराधिकारी प्रभावशाली साबित नहीं हुए। इसके पश्चात बारहवीं सदी के अन्तिम वर्षों में गौरं के मोहम्मद गौरी ने हिन्दुस्तान की उत्तर–पश्चिम सीमा पर आक्रमण का भारत में एक स्वतंत्र राज्य की स्थापना का मार्ग खोल दिया।

मुहम्मद गौरो के आक्रमण और दिल्ली सल्तनत की स्थापना (1206 ई.):

12वीं सदी के मध्य में गौरीवंश का उदय हुआ था। आरम्भ में गौरी, गजनी के अधीनस्थ थे परन्तु शीघ्र ही वे स्वतंत्र हो गए थे। गौंर में जो वंश मुख्य था, उसका नाम था 'शंसवानी'। इतिहासकार सतीशचन्द्र मानते हैं कि ''शंसबानियो ने, जो मूलतः गौर के कई छोटे–छोटे सरदारों में से एक थे, उस क्षेत्र में इस्लाम को सुदृढ़ आधार प्रदान करने में प्रमुख भूमिका निभाई थी। 12वीं सदी के मध्य तक वे शक्तिशाली हो गए थे। 1163 ई. में गियासुद्दीन मुहम्मद को गौर की राजगद्दी प्राप्त हुई लेकिन उसने अपने छोटे भाई मुईज्जुद्दीन मोहम्मद ;मोहम्मदद्ध गौरी को गज़नी का शासन सौंप दिया था। वह गज़नी पर स्वतंत्र शासक की भांति राज्य करता रहा। मोहम्मद गौरी के हिन्दुस्तान पर आक्रमण करने के विषय में भी बहुत से कारणों का उल्लेख किया जाता है। ऐसा कहा जाता है कि एक तो वह महत्वकांक्षी था दूसरे वह अपने को पंजाब की गद्दी का अधिकारी मानता था। क्योंकि उसके विचार में पंजाब गज़नी साम्राज्य का ही एक भाग था। इसके अतिरिक्त हिन्द की कमजोर एवं अव्यवस्थित दशा भी उसे आक्रमण के लिए प्रेरित कर रही थी। इसके अतिरिक्त वह सम्मान और अकूत धन–दौलत प्राप्त करने का भी इच्छुक था। लेकिन कुछ विद्वान यह भी मानते हैं कि वह हिन्दुस्तान में इस्लाम का प्रसार भी करना चाहता था। कुल मिलाकर उसके आक्रमण राजनैतिक व आर्थिक उद्धेश्यों से ही प्रेरित थे।

हिन्दुस्तान के विरुद्ध मोहम्मद गौरी का पहला सैनिक अभियान 1175 ई० में हुआ, जब उसने आक्रमण कर मुल्तान पर कब्जा कर लिया जो उस समय करमाथियों के नियंत्रण में था। 1176 ई० में उसने उच्छ जीता[12]। 1178–79 ई० में उसने गुजरात पर चढ़ाई कर दी लेकिन गुजरात के शासन भीम द्वितीय ने आबू पर्वत के निकट मोहम्मद गौरी को पराजित किया। गुजरात अभियान की विफलता के बाद मोहम्मद गौरी ने अपनी समस्त योजना ही बदल दी। 1179–80 में गजनवियों से पेशावर जीत लेने के बाद उसने 1181 ई० में लाहौर में चढ़ाई कर दी। गजनवी शासक खुसरों मलिक ने उसके सम्मुख घुटने टेक दिए। इतिहासकार सतीश चंद्र मानते हैं कि इससे गौरियों और उत्तर भारत के राजपूत शासकों के बीच संघर्ष का मंच तैयार हो गया था। दोनों के बीच तब तराइन नामक स्थान पर युद्ध हुआ। यह युद्ध 1191 ई. में हुआ और इसे भारतीय इतिहास में तराइन का प्रथम युद्ध के नाम से प्रसिद्धी मिली। इस युद्ध में पृथ्वीराज चौहान को पूर्ण विजय मिली। 1192 ई. में मोहम्मद गौरी और पृथ्वीराज के बीच पुनः तराइन नामक स्थान पर युद्ध लड़ा गया। इसे तराइन का दूसरा युद्ध भी कहते है। मोहम्मद गौरी ने इस युद्ध के लिए भरपूर तैयारी की थी। इस युद्ध में पृथ्वीराज की पराजय हुई और मोहम्मद गौरी को विजयश्री प्राप्त हुई। आधुनिक इतिहासकारों ने तराइन के इस दूसरे युद्ध को भारतीय इतिहास की एक युगान्तकारी घटना माना है । इसके पश्चात समस्त चौहान राज्य गौरियों के कब्जे में आ गया। इस प्रकार दिल्ली तक के क्षेत्र गौरी के नियंत्रण में आ गए थे । कुछ समय पश्चात् कन्नौज पर भी मोहम्मद गौरी ने कब्जा कर लिया था। तत्पश्चात् बयाना, कांलिजर, महोबा, बुंदेलखंड के क्षेत्र भी जीत लिए गए। इस प्रकार इन विजयों के द्वारा दिल्ली सल्तनत की प्रशासनिक नींव डालने का मार्ग प्रशस्त हुआ। हिन्दुस्तान में सल्तनत की स्थापना की दृष्टि से पहला महत्वपूर्ण वंश ममलूक (1206–1290) सुलतानों का था। ममलूक के पश्चात् खलजी (1290–1320), उसके पश्चात् तुगलक वंश (1320–1412) तत्पश्चात् सैयद और अन्त में लोदी वंश (1451–1526) थे[13]। यह दिल्ली सल्तनत (1206–1526) जिसकी नींव मोहम्मद गौरी के एक दास ऐबक ने 1206 ई. में डाली थी मुख्यतः फारसी प्रशासनिक परम्परा पर आधारित थी। इस प्रकार उत्तरी भारत में 13वी सदी के प्रारम्भिक चरण से तुर्क शासन व्यवस्था सुदृढ़ता से स्थापित हो गई थी। इस सल्तनत की स्थापना होने के प्रभावस्वरूप नई–नई धाराएं आई चाहे वो प्रशासनिक क्षेत्र में हों चाहे आर्थिक या फिर बौद्धिक साहित्यिक क्षेत्र में । धीरे–धीरे इस नई व्यवस्था के वृहद प्रभाव भी पड़ने शुरू हो गए थे।

इस्लाम का राजनीति, समाज–संस्कृति और आर्थिक व्यवस्था पर प्रभाव :

हिन्दुस्तान में इस्लाम के आगमन का प्रभाव न केवल राजनीति और प्रशासन के क्षेत्र में बल्कि सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन पर भी पड़ा। इतिहासकार हबीबुल्लाह मानते हैं कि भारत में एक स्वतंत्र इस्लामी राज्य की स्थापना का श्रेय तुर्कों को ही जाता है। तुर्कों ने एक शक्तिशाली एवं केन्द्रीकृत राजनीतिक संगठन की स्थापना की। विशेषकर विभिन्न क्षेत्रों की सामन्तवादी परम्पराओं को तोड़ने और साम्राज्य के भिन्न भिन्न भागों को एक केन्द्र के साथ जोड़ने के उद्देश्य से इक्ता व्यवस्था शुरू की गई। तुर्कों ने पूरे साम्राज्य के विभिन्न क्षेत्र इक्ता के रूप में बांट दिए। इक्ता वास्तव में राजस्व के हस्तान्तरण से सम्बन्धित संस्था थी जिससे अधिकारी अपनी सेना का व्यय भी निर्वाह करते और साथ–साथ इलाके में कानून और व्यवस्था भी बनाए रखते थे। निजामुल मुल्क ने सियासतनामा में इक्ता के नियम एवं इक्तादार या मुक्ता की स्थिति का विस्तार से उल्लेख किया है। इस व्यवस्था के अन्तर्गत दिए जाने वाले क्षेत्र दो प्रकार के थे – छोटे तथा वृहद। बड़े इक्ता प्रमुख विश्वासपात्रों को ही प्रदान किए जाते थे। अभी तक ऐसा माना जाता है कि सुल्तान इल्तुतमिश के शासनकाल में इक्ता व्यवस्था प्रशासन का आधार थी। उसके शासनकाल में मुल्तान से लेकर लखनौती तक के क्षेत्र छोटे व बड़े (इक्ता) मुक्ताओं को बांटे गए थे लेकिन आधुनिक इतिहासकार इक्तैदार हुसैन सिद्दीकी यह मानते हैं कि इस समय तक सल्तनत की राज्य प्रणाली में इक्ता प्रथा का सुव्यवस्थित रूप नहीं उभरा था तथा इस प्रणाली में समय के साथ परिवर्तन किये जाते रहे[14]। आगे के काल में सुल्तान बलबन ने इक्ता व्यवस्था में सुधार करने का प्रयत्न किया था। उसने इक्तादारों के क्रियाकलाप पर नियन्त्रण व निगाह रखने के लिए इक्ता से छोटी इकाई शिक भी बनाई। सुल्तान अलाऊद्दीन खलजी के शासनकाल में इक्ता धारकों की स्थिति कमजोर पड़ी क्योंकि वह अपनी सेना तथा अधिकारियों को नकद वेतन देने को तरजीह देता था लेकिन सुल्तान फिरोज तुगलक के शासनकाल में इक्तादारों के प्रति पुनः उदार नीति का प्रादुर्भाव हुआ था।

उत्तरी भारत में तुर्कों की विजय के महत्वपूर्ण आर्थिक प्रभाव भी पड़े। सुप्रसिद्ध इतिहासकार मोहम्मद हबीब यह मानते हैं कि तुर्क शासन की स्थापना के कारण आर्थिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण बदलाव आए। भारत का बाहरी दे''ों से व्यापार सम्पर्क बढ़ा एक मानक मुद्रा के प्रचलन से देश के आन्तरिक व्यापार एवं वाणिज्य में भी वृद्धी हुई। तुर्कों ने पहले से चले आ रहे आर्थिक संगठन से अधिक श्रेष्ठ आर्थिक संगठन का निर्माण किया। इसी कारण नगरीय केन्द्रों का काफी विस्तार भी हुआ। इस संदर्भ में इतिहासकार मोहम्मद हबीब ने शहरी क्रान्ति से संबन्धित सिद्धान्त भी प्रतिपादित किया है[15]। वे मानते हैं कि शहरी क्रान्ति लाने में तुर्की शासक वर्ग की भूमिका अधिक महत्वपूर्ण रही थी। तुर्कों के आने के बाद शहर में काम करने वाले श्रमिकों के साथ किए जाने वाले विभेद मिटा दिए गए। तुर्कों ने जब नगरों में प्रवेश किया तो उनके साथ निम्न वर्ग एवं जाति के हिन्दू श्रमिकों को भी प्रवेश मिला, क्योंकि औद्योगिक उपक्रमों के लिए उनकी सेवाओं की जरूरत थी। इस प्रकार नई शासन व्यवस्था में नगर उद्योग और व्यापार के समृद्धशाली केन्द्र बन गए थे। मोहम्मद हबीब मानते हैं कि यह परिवर्तन मुख्यतः दिल्ली शहर के तेजी से होने वाले विकास में परिलक्षित हुआ। इतिहासकार इरफान हबीब भी मानते हैं कि 13–14वीं सदियों के दौरान शहरी अर्थव्यवस्था का काफी विकास हुआ और नगरों की संरचना व उनके आकार में भी वृद्धि हुई। इस बात की पुष्टि समकालीन विदेशी यात्रियों के वृतान्तों से भी होती है। इसलिए कुछ एक विद्वान मानते हैं कि सल्तनत एक फलती–फूलती शहरी अर्थव्यवस्था की तस्वीर प्रस्तुत करती है।

तुर्कों के आगमन के पश्चात 13वीं सदी के दौरान ग्रामीण समाज के ढ़ांचे में भी कुछ परिवर्तन हुए। प्रारम्भिक तुर्क सुल्तान भू–राजस्व की वसूली के लिए हिन्दू सरदारों का ही सहारा लेते थे और प्रचलित प्रथाओं के अनुसार किसानों से इसकी वसूली करने की दायित्व उन्हीं को सौंपा हुआ था। लेकिन 14वीं सदी में इस नीति में परिवर्तन आया। सुल्तान अलाऊदीन खलजी ने अपनी कृषि नीति के अन्तर्गत गांवों के परम्परागत सुविधा प्राप्त लोगों–जैसे खुतों, मुकद्दमों के विरुद्ध कार्यावाही करने का प्रयास किया था[16]। इसके पश्चात् कुछ ऐसे ही प्रयास तुगलक सुल्तान मुहम्मद बिन तुगलक ने भी किये थे। इन दोनों सुल्तानों के राज्यकाल में भू–राजस्व की दर काफी अधिक रही थी। लेकिन आगे फिरोज तुगलक के शासन काल में नहर व्यवस्था के कारण कृषि का काफी विस्तार भी हुआ। इस सन्दर्भ में इतिहासकार सतीशचन्द्र मानते हैं कि ''उसके शासन काल को आमतौर पर ग्रामीण समृद्धि और खुशहाली का काल माना जाता है।'' इस प्रकार ग्रामीण समाज में भी कुछ परिवर्तन परिलक्षित हुए थे।

इसी प्रकार तुर्कों की विजय से हिन्दूस्तान के व्यापार पर भी प्रभाव पड़ा। इस अवधि में भारत का व्यापार बढ़ा और कृषि के साथ–साथ अनेक उद्योग धन्धे पनपने लगे। दिल्ली के सुल्तानों ने व्यापारिक मार्गों की सुरक्षा पर ध्यान दिया। जियाउद्दिन बर्नी के फतवा–ए–जहादॉरी में व्यापारी वर्ग तथा आम जनता की भलाई के लिए शासकों के अनेक निर्देशों का उल्लेख किया गया है। सुल्तान बलबन एवं अलाऊद्दीन खलजी ने मार्गों की सुरक्षा तथा र्निविरोध यातायात के लिए कड़े कदम उठाए थे। सुल्तान अलाऊद्दीन की नीति के परिणामस्वरूप ही सल्तनत की राजधानी दिल्ली दूर–दूर के व्यावसायिक एवं व्यापारिक केन्द्रों के सुरक्षित मार्गों से जुड़ती गई। इसी प्रकार सुल्तान मुहम्मद तुगलक का काल भी व्यापारिक गतिविधियों के लिए महत्वपूर्ण था। विदेशी यात्री इबनबतूता[17] ने इस अवधि के बहुत से व्यापारिक नगरों एवं उनकी व्यापारिक गतिविधियों का वर्णन विस्तार से किया है। ऐसी जानकारी भी मिलती कि आगे फिरोजशाह तुगलक ने अनेक ऐसे करों को समाप्त कर दिया जिनके भुगतान के लिए व्यापारियों को काफी कष्ट भोगना पड़ता था। समकालीन इतिहासकार अफीफ ने इस काल में व्यापारिक काफिलों को दूर–दूर देशों में ले जाने का वर्णन किया है। इस प्रकार तुर्कों की विजय के फलस्वरूप समय–समय पर व्यापार को बढ़ावा देने के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाए गये।

बहुत से आधुनिक विद्वानों नें इस्लाम की विजय के नकारात्मक प्रभाव भी वर्णित किये गए है। सभी तुर्क सुल्तानों को अत्याचारी कहा गया है। इतिहासकार के.एस. लाल ने अपनी पुस्तक ग्रोथ ऑफ मुस्लिम पापुलेशन इन मेडिवल इण्डिया में संकेत दिया है कि तुर्क सुल्तानों ने धर्म परिवर्तन के द्वारा हिन्दुओं की संख्या एक तिहाई कम कर दी। किन्तु यह पूर्णरुपेण सही नहीं है।

एक अन्य महत्वपूर्ण प्रश्न यह उठता है कि भारत की विजय के बाद क्या मुसलमान भारतीय समाज में घुलमिल गए अथवा नहीं। इस पर अनेक मत हैं। कुछ अन्य विद्वानों का मत है कि मुसलमानों ने अपने आपको पृथक रखने की बड़ी कोशिश की।

वे मक्का की ओर ही देखते रहे और उन्होंने अपने कानून और भाषा साहित्य आदि पृथक ही रखे। वे भारत से बाहर अरेबिया, ईरान देशों को ही अपना समझता रहे। लेकिन कुछ विद्वानों का मत है कि जो मुसलमान भारत में आये थे वे भारत के ही हो गये और उन्होंने भारत को अपना लिया। समय के साथ तुर्क सुल्तानों को हिन्दुओं के प्रति अपना दृष्टिकोण बदलना पड़ा और हिन्दुओं ने भी तुर्क शासकों के प्रति अपना रैवया बदला। हिन्दू और मुसलमानों में विभिन्न क्षेत्रों में लेन–देन भी शुरू हुआ। उन्होंने एक दूसरे को समझने की कोशिश की। इस प्रक्रिया को प्रोत्साहित करने में भक्ति एवं सूफी संतों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

इतिहासकार तारा चन्द[18] का मत है कि हिन्दू धर्म साहित्य कला और विज्ञान में मुसलमानों के सम्पर्क से बहुत कुछ बदल गया है लेकिन टाईटस जैसे इतिहासकारों का मत है कि हिन्दू लोक प्रायः पृथक ही रहे। तुर्कों की विजय का बौद्धिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्र पर भी प्रभाव पड़ा था। तुर्कों ने प्रशासन के उच्चतर स्तर पर फारसी भाषा को लागू किया। इससे प्रशासन की भाषा में एकरूपता आई। इसके अतिरिक्त बौद्धिक एवं साहित्य क्षेत्र में भी उन्नती संभव हुई। इस अवधि में मध्य एशिया से सैंकड़ों कवि, उलेमा, कलाकार, सूफी सन्त एवं बुद्धिजीवी यहां आकर बसे और उन्होंने यहां के बौद्धिक–सांस्कृतिक जीवन को प्रभावित करना शुरू किया। धीरे–धीरे दिल्ली व लाहौर इस्लामिक बौद्धिक संस्कृति के उत्कृष्ट केन्द्र बन कर उभरे थे। इसके अतिरिक्त तुर्क विजय के बाद इस्लाम के प्रचार के तौर–तरीके में भी अंतर आ गया था। अनेक मुस्लिम सूफी–सन्तों ने यहां के सामाजिक जीवन को प्रभावित करना शुरू कर दिया था।

कुछ विद्वानों का मत है कि सूफियों के उदार मानवीय दृष्टिकोण का समाज के दृष्टिकोण पर व्यापाक प्रभाव पड़ा। उनके प्रभावस्वरूप अनेक लोगों ने इस्लाम को अपनी इच्छा से अपना लिया था। सूफी[19] वास्तव में इस्लाम के उदार व रहस्यवादी पक्ष के प्रतिनिधि थे और अनेक सिलसिलों में बंटे थे। इनमें चिश्ती, सुहरावर्दी, कादिरी, नक्शबन्दी आदि प्रमुख थे। हिन्दुस्तान में मुख्यतः चिश्ती सिलसिला को ही ज्यादा लोकप्रियता प्राप्त हुई थी। हिन्दुस्तान में चिश्ती सिलसिले के संस्थापक मुइनुद्दीन चिश्ती थे। उनका दृष्टिकोण बड़ा उदार एवं मानवतावादी था। उनके कई शिष्यों को प्रसिद्धि मिली। बाबा फरीद व निजामुद्दीन औलिया[20] भी प्रतिष्ठित चिश्ती सन्त थे। इन सभी सूफी संतों का दृष्टिकोण सहिष्णु एवं उदार था। इनके उदारवादी दृष्टिकोण के कारण न केवल एक बड़ी संख्या में मुसलमान अपितु हिन्दू जन भी बड़ी संख्या में प्रभावित हुए। सूफियों के प्रयासों से हिन्दू मुस्लिम एकता का मार्ग भी प्रशस्त हुआ और विशेष रूप से उनकी खानकाहों और मजारों ने हिन्दू व मुसलमानों के सामाजिक तनावों को कम करने व एक मिली–जुली संस्कृति को विकसित करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया था। आमतौर पर सूफियों के पवित्र जीवन, उदारता और अद्भुत चमत्कारों की लोकमान्यता से भी आमजन इनसे प्रभावित होते थे ।

इस प्रकार कुल मिलाकर हिन्दुस्तान में इस्लाम के आगमन के पश्चात् प्रत्येक क्षेत्र में चाहे वो राजनीतिक–प्रशासनिक क्षेत्र हो या फिर धार्मिक अथवा बौद्धिक–साहित्यिक क्षेत्र इन सभी क्षेत्रों में महत्वपूर्ण बदलाव आए थे।

सारांश के तौर पर कहा जा सकता है कि हिन्दुस्तान में इस्लाम का आगमन मुख्यतः अरब व्यापारियों तथा तुर्क आक्रमणकारियों के साथ हुआ था। यद्यपि अरब लोग हिन्द पर आक्रमण करने वाले पहले मुस्लिम आक्रमणकारी थे तथापि अरबों की बजाय तुर्कों के आक्रमण कहीं ज्यादा प्रभावपूर्ण थे। हिन्दुस्तान में इस्लाम का वास्तविक प्रतिनिधित्व करने वाले तुर्क ही थे। उन्होंने ही हिन्दुस्तान में एक स्वतंत्र सल्तनत की स्थापना की। तुर्क आक्रमणकारियों के साथ एक बड़ी संख्या में मुस्लिम सूफी सन्त, कवि, उलेमा आदि हिन्द में आकर बस गए थे और उन्होंने यहां के सांस्कृतिक एवं बौद्धिक जीवन को प्रभावित करना शुरू कर दिया था। धीरे–धीरे इस्लाम ने हिन्दुस्तान के प्रत्येक क्षेत्र में जैसे प्रशासनिक, आर्थिक, धार्मिक, बौद्धिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में लोगों के जीवन को प्रभावित करना शुरू कर दिया था । विशेष रूप से मुस्लिम सूफी सन्तों ने समाजिक तनावों को कम करने व एक मिली–जुली संस्कृति को प्रोत्साहित करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया था। इसके अतिरिक्त मध्यकालीन नगरीकरण की प्रक्रिया सहित आर्थिक क्षेत्र में भी इस्लाम का प्रभाव महत्वपूर्ण रहा था।

संदर्भ सूची

इब्न खलदून का मुकद्दमा, हिन्दी अनुवाद एस. ए. रिजवी, हिन्दी समिति ग्रन्थमाला, उत्तर प्रदेश,पृ. 80–90

इक्तैदार हुसैन सिद्दीकी; एथोरिटि एंड किंगशिप अंडर दि सुल्तान ऑफ देहली, नई दिल्ली 2006, पृ. 65

इक्तैदार हुसैन सिद्दीकी; मेडिवल इंड़िया; एसेज़ इन इनटिलैक्चुयल थॉट एंड कल्चर, भाग 1 दिल्ली 2003, पृ. 9

इनसाइक्लोपीड़िया ऑफ रिलीजन एंड एथिक्स, वॉल्यूम–12, एडिनबरा, 1963, पृ. 10

ईश्वरी प्रसाद; हिस्ट्री ऑफ मेड़िवल इंड़िया, इलाहबाद, 1968, पृ. 115

बरनी; तारीख–ए–फिरोज़शाही, हिन्दी अनुवाद, एस. ए. रिजवी, खिलजी कालीन भारत, अलीगढ़, 1958, पृ 128

बरनी; तारीख–ए–फिरोजश''ाही, हिन्दी अनुवाद, एस. ए. रिजवी, खिलजी कालीन भारत, पृ.101–103

विस्तार के लिए देखिए; फिलीप हिट्टी; हिस्ट्री ऑफ दि अरब्बस, मैकमिलन, 2002

हबीबुल्लाह; दि फाउंडेशन ऑफ मुस्लिम रुल इन इंडिया, इलाहबाद, 1997, पृ. 125

हबीबुल्लाह, पूर्वोक्त, पृ. 160

सर वुल्लजले हेग; द. कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इंड़िया, वॉल्यूम–3, कैम्ब्रिज, 1938, पृ. 262

स्टेनले लेनपूल; मेड़िवल इंड़िया, अंडर मुहम्मडन रुल (712–1764) न्यूयार्क, 1903, पृ. 67

देखिए; एस. ए. रिजवी, आदि तुर्क कालीन भारत, अलीगढ़ 1956, खिलजी कालीन भारत, अलीगढ़ 1958, तुगलक कालीन भारत, अलीगढ़, 1958

देखिए; इब्नबतूत्ता; यात्रा विवरण, हिन्दी अनुवाद एस. ए. रिजवी, तुगलक कालीन भारत, अलीगढ़ 1956, पृ. 165

देखिए; इरफान हबीब ;संपादितद्ध ; मध्यकालीन भारत, अंक 3, दिल्ली 2003, पृ. 10–31

देखिए; मोहम्मद हबीब, सुलतान महमूद ऑफ गज़नी; दिल्ली, 1961

देखिए; तांराचंद, भारतीय संस्कृति पर इस्लाम का प्रभाव, अनुवादक, सुरेश मिश्र, नई दिल्ली 2006

वही

वही, पृ. 60

अमर फारुखी; प्राचीन और मध्यकालीन सामाजिक संरचनाएं और संस्कृतियां, अनुवादक शाहिद अख्तर, दिल्ली 2003, पृ. 298–299

Corresponding Author

Dr. Anurag*

Assistant Professor, Department of History, Guru Nanak Khalsa College, Yamuna Nagar, Haryana

E-Mail – dranuraggnk@gmail.com